लौट आएँगे वह

विमला लाल

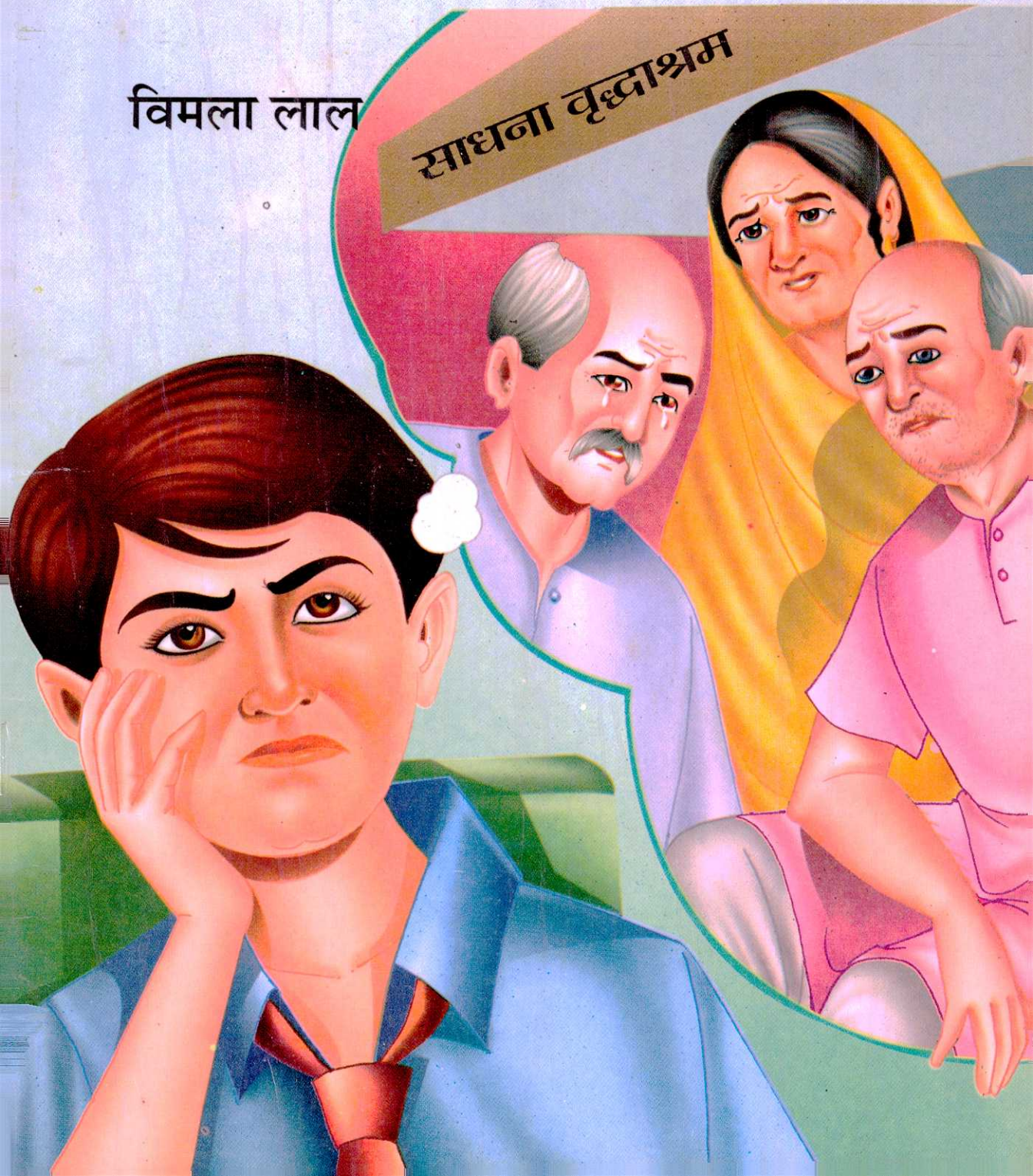

आमुख

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ, नई दिल्ली ने नवसाक्षरों की आवश्यकताओं, अभिरुचियों और अपेक्षाओं के अनुरूप साक्षरता-साहित्य के निर्माण में नवाचार की पहल की है। हिंदीभाषी क्षेत्रों के नवसाक्षरों की पहचान की रोशनी में प्रौढ़ साक्षरता में लेखनरत साहित्यकारों, समाजार्थिक-चिंतकों, प्रौढ़ शिक्षा विशेषज्ञों तथा सतत शिक्षा केंद्रों के अनुभवी आयोजकों ने 23-24 अगस्त, 2007 की अवधि में भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ में आयोजित विचार गोष्ठी में नवसाक्षरों के लिए उपयोगी साहित्य-लेखन पर गहन विचार-विमर्श किया।

साक्षरता-सामग्री के पाठ्य विवरण पर संगोष्ठी में सम्मिलित विषय विशेषज्ञों में सहमति हुई। साक्षरता सामग्री के तीन प्रमुख उद्देश्य निर्धारित किए गए। पहला उद्देश्य, जो नवसाक्षरों की साक्षरता को सजीव बनाने और आगे बढ़ाने में सहायक हो; दूसरा उद्देश्य, जो जन-कल्याण और सामूहिक कार्य-संस्कृति को बढ़ावा देनेवाला हो, ताकि सब लोग मिल-जुलकर रहते हुए विकास की ओर बढ़ें। तीसरा उद्देश्य, जो अपने अधिकारों और कर्तव्यों को ध्यान में रखते हुए सार्वजनिक हित के लिए उन्हें प्रेरणा दे सके, जिससे उनका कल्याण, समाज का हित और राष्ट्र का विकास होता रहे।

इस प्रौढ़ साक्षरता साहित्य कार्यशाला में श्रीमती विमला लाल द्वारा लिखित पुस्तक '**लौट आएँगे वह**' नवसाक्षरों को जागरूक पाठक बनाने और विकास के क्षेत्र में उन्हें आगे बढ़ाने के अवसर प्रदान करेगी। इसका संप्रेषण और भाषा स्तर भी प्रौढ़ नवसाक्षरों में जाँच लिया गया है। इस पुस्तक का विधिवत् क्षेत्र-परीक्षण करा लिया गया है। इस पुस्तक में नवसाक्षरों के सामाजिक सरोकारों को प्राथमिकता दी गई है। हमारा विश्वास है कि यह पुस्तक निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति में अवश्य सफल होगी।

इसे प्रकाशित करने में और इसे नवसाक्षरों तक पहुँचाने में प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली ने जो सहयोग प्रदान किया है, हम उसके लिए हृदय से आभारी हैं। प्रसन्नता की बात यह है कि प्रभात प्रकाशन ने इस शृंखला की सभी पुस्तकों के प्रकाशन एवं वितरण का दायित्व स्वीकार किया है। इस पुस्तक के पाठकों से हमें जो सुझाव प्राप्त होंगे, हम उनका स्वागत करेंगे।

17-बी, इंद्रप्रस्थ एस्टेट
नई दिल्ली-110002

—डॉ. मदन सिंह
महासचिव, भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
प्रभात प्रकाशन, दिल्ली™
ISO 9001 : 2000 प्रकाशक

लौट आएँगे वह

विमला लाल

(Estd : 1939)
भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली™
ISO 9001:2000 प्रकाशक

प्रकाशक • प्रभात प्रकाशन™
4/19 आसफ अली रोड
नई दिल्ली-110002
तत्त्वावधान • भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
सर्वाधिकार • सुरक्षित
संस्करण • प्रथम, 2008
मूल्य • पच्चीस रुपए
मुद्रक • नरुला प्रिंटर्स, दिल्ली

LAUT AAYENGE WAH *by* Smt. Vimla Lal Rs. 25.00
Published by Prabhat Prakashan, 4/19 Asaf Ali Road, New Delhi-2 (INDIA)
ISBN 978-81-7315-620-5

लौट आएँगे वह

—: 1 :—

गौतम चौधरी शामलाल का इकलौता पोता है। बड़ा ही प्यारा। बड़ा ही समझदार। पढ़ने में सबसे आगे। देखने में स्वस्थ और सुंदर। बातचीत में बहुत ही मीठा और सलीकेदार। गौतम की दादी राधा, प्यार से उसे गोलू कहकर बुलाती हैं।

गौतम के पिता रामबाबू फौज में नौकर हैं। बाहर ही रहते हैं। जगह-जगह तबादला होता रहता है। इसलिए गौतम बचपन से, अपने दादा-दादी के पास ही रहता है। उनके अपने गाँव सोनपुर में।

सोनपुर में चौधरी की अपनी जमीन है। खेत-खलिहान हैं। पुरखों की बड़ी सी हवेली भी है। खाता-पीता घर है। किसी चीज की कमी नहीं। चौधरी बहुत खुश हैं अपने गाँव में।

गाँव के लोग भी चौधरी का बहुत आदर करते हैं। दु:ख हो, तकलीफ हो, उन्हीं से सलाह-मशविरा करते हैं। चौधरी भी उनका पूरा साथ देते हैं। वक्त पड़ने पर मदद भी करते हैं। रुपए-पैसे से भी। अन्न-अनाज से भी।

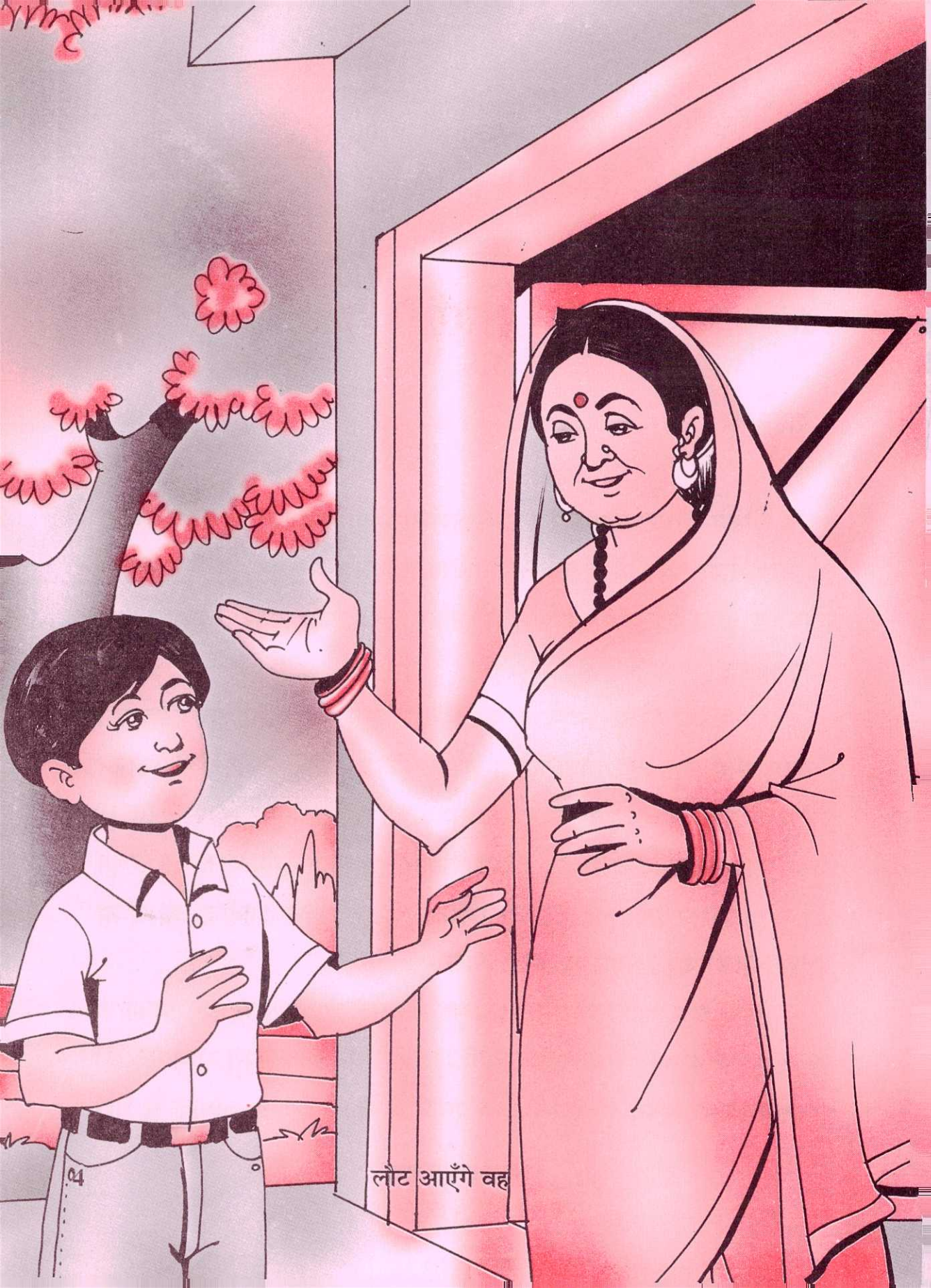

सोनपुर में बच्चों का स्कूल तो है। लेकिन केवल आठवीं जमात तक का। चौधरी ने स्कूल को आगे बढ़ाने की कोशिश तो की थी। कुछ लिखा-पढ़ी भी हुई थी। लेकिन अभी तक कुछ हुआ नहीं था।

जो कोई आगे पढ़ना चाहता, उसे शहर ही जाना पड़ता। वैसे जाता तो कोई बिरला ही था।

गौतम ने भी आठवीं पास कर ली थी। आगे पढ़ने के लिए, वह भी शहर चला गया।

गौतम गया तो चौधरी ने भी गाँव छोड़ दिया। बच्चा अभी छोटा था। अकेला कैसे रहने देते! कभी गाँव के बाहर भी तो नहीं गया था। इसलिए चौधरी ने शहर में ही एक घर ले लिया।

गाँव का सारा काम अपने चचेरे भाई मदन को सौंप दिया। वह खेती-बाड़ी देखता था और हवेली की देखभाल भी करता था। चौधरी को कोई चिंता नहीं थी।

हर फसल के बाद मदन शहर आता था और हिसाब कर जाता था। वैसे कभी-कभार चौधरी भी गाँव का चक्कर काट आते थे। सबसे मिल लेते थे, और काम-काज भी देख लेते थे। बड़ा मोह था उन्हें गाँव से।

गौतम शहर आकर बहुत खुश था। यहाँ गाँव जैसे खुले मैदान, बड़े-बड़े खेत और लहलहाती फसलें तो नहीं थीं। पर ऊँचे-ऊँचे मकान थे। बड़े-बड़े बाजार, दो मंजिला बड़ा सा स्कूल और नए-नए साथी, उसे बहुत अच्छे लगे थे। स्कूल भी अब वह बस से जाता था। गाँव की तरह पैदल नहीं।

गौतम की शुरू से एक आदत थी। स्कूल से आकर वह दिनभर की बातें दादा-दादी को सुनाता था। किसने, किसको क्या कहा। किस अध्यापक ने क्या पढ़ाया। सब ब्योरेवार बताता था। दादा-दादी बड़े प्यार से सुनते भी थे और खुश भी होते थे। जहाँ कुछ कहना या बताना होता, बता भी देते। यह उनका रोज का नियम था।

लेकिन आज जब गौतम स्कूल से लौटा तो कुछ उदास था। घर आकर न हँसा, न बोला। न ही किसी से कोई बात की। बस चुपचाप, बस्ता कंधे से उतारा। पढ़नेवाली मेज पर रखा। और स्कूल की वरदी बदलने के लिए भीतर चला गया। फिर आकर हाथ धोए, और खाने के लिए बैठ गया। अपने दादा के पास।

जब से चौधरी शहर आए थे, उनका यह नियम था कि सब मिलकर ही खाना खाते थे। गौतम के स्कूल से लौटने के बाद।

दोनों ने एक-दूसरे की ओर देखा। इशारे में पूछा भी कि आखिर बात क्या है। लेकिन समझ में किसी के कुछ नहीं आया। फिर भी चुप रहे। बोले कुछ नहीं।

दादी ने खाने की थालियाँ लगा दीं। एक बार सिर उठा गौतम की ओर देखा भी। फिर चुपचाप खाना परोसने लगीं।

जब गौतम फिर भी नहीं बोला तो उनसे रहा नहीं गया। और हाथ रोक पूछ लिया—"क्या बात है गौतम। कुछ बोलता क्यों नहीं। किसी ने कुछ कहा है, या किसी से झगड़ा हो गया है।"

दादी के इतने सारे सवाल सुन, गौतम ने थाली पर से नजर उठाई

और दादी की ओर देखकर बोला—"झगड़ा? झगड़ा भला क्यों होगा? तुम तो जानती हो, मैं कभी किसी से झगड़ा नहीं करता।"

"तो फिर इतने उदास क्यों हो?"

"बस ऐसे ही। कुछ अच्छा नहीं लग रहा है।"

गौतम ने बुझी सी आवाज में कहा।

"यही तो पूछ रही हूँ। क्यों नहीं अच्छा लग रहा?" दादी ने दोबारा पूछा तो गौतम ने धीरे से बताया "आज हम उपासना गए थे। स्कूलवाले ले गए थे।"

गौतम ने अभी इतना ही कहा था कि चौधरी एकदम हँसकर बोल पड़े। "अच्छा! तो तेरे स्कूल में उपासना भी होती है। तूने कभी बताया तो नहीं।" शायद चौधरी गौतम को सहज करना चाहते थे। और हुआ भी वही।

दादा की बात सुनकर गौतम भी हँसने लगा। झट से बोला "धत् दादाजी, आप भी न जाने क्या सोचते हो! यह वह भगवान् वाली उपासना थोड़े ही है जो आप समझ रहे हो। यह तो नाम है। उस घर का, जहाँ बूढ़े लोग रहते हैं। आज हम उसे देखने गए थे। उनसे मिलना, उनसे बातचीत करना, उनके लिए कुछ करना। यह सब हमारी पढ़ाई से जुड़ा है। इसीलिए टीचर ले गई थीं हमें।"

गौतम की बात सुनकर चौधरी समझ गए कि गौतम किसी वृद्ध आश्रम की बात कर रहा है।

''दूसरा वे रिश्तों को मानते भी हैं, और निभाते भी है। परिवार से लगाव है उनका। माँ-बाप से ममता है। देश की धरती से जुड़े हैं वे। रीति-रिवाज भी पहचानते हैं। लोग उन्हें पिछड़ा हुआ कहते हैं। अंधविश्वासी भी कहते हैं। फिर भी वे अपना विश्वास छोड़ते नहीं। न ही किसी का दिल तोड़ते हैं।''

''लेकिन शहरों में ऐसा नहीं है। यहाँ भाग-दौड़ का जीवन है। धन कमाने की लालसा अधिक है। औरत-आदमी सब उसी के पीछे भाग रहे हैं। यहाँ परिवार के कोई मायने नहीं। रिश्ते भी पैसे और स्वार्थ के हैं। लाभ-हानि से जुड़े हुए। जितना लाभ, उतना रिश्ता। माँ-बाप के साथ भी उनका यही नाता है।''

''बाप के पास दाम हैं तो बाप, वरना तू कौन, मैं कौन। अपमान करने से भी नहीं चूकते। कई तो गाली-गलौज पर भी उतर आते हैं। मार-पीट भी कर लेते हैं।''

''जो ऐसा नहीं करते। खुद को तमीजदार कहते हैं। वह निगाहों से ही सीना चीर लेते हैं। न कोई देखे, न कोई सुने।''

''ऐसे लोगों को, माँ-बाप को बाहर करने के बहुत बहाने मिल जाते हैं।''

''किसी के पास वक्त नहीं। तो किसी के पास जगह नहीं। किसी का घर छोटा पड़ जाता है तो किसी का दिल ही सिकुड़ जाता है। किसी को दो रोटी सेंकनी भारी लगती है तो किसी को उनका खाना, रहना, उठना-बैठना ही नहीं भाता।''

"ऐसे में वह जाएँ भी तो कहाँ जाएँ। कई तो खुद ही तंग आकर चले जाते हैं। कइयों को हाथ पकड़ बाहर कर देते हैं।" कहते-कहते चौधरी ने थाली पर से नजर उठाकर गौतम से कहा—

"तू ही तो बता रहा था एक दिन अपने मित्र राजू के दादा की कहानी। घर उन्हीं का है। पर कैसे रहते हैं। देखा है तूने। चल नहीं सकते। पर बाजार का बोझा जरूर ढो लाते हैं। पैसे-पैसे का हिसाब ऐसे देते हैं, जैसे नौकर हों। फिर भी शक की नजर उन पर टिकी रहती है। कहीं रास्ते में चाय तो नहीं पी आए।"

"जानता है तू, क्यों सहते हैं वह। केवल दो वक्त की रोटी के लिए। वह भी एक बार थाली खिसका दी जाती है। पलटकर कोई देखता नहीं कि पेट भरा या नहीं।"

"ऐसी रोटी के निवाले उनके गले से कैसे उतरते हैं, यह वही जान सकते हैं। कोई और नहीं।" दादा ने बड़े दु:ख से कहा। "हाँ दादाजी। अब तो वह भी चले गए हैं। राजू के पापा उन्हें छोड़ आए हैं। शायद ऐसे ही किसी आश्रम में।"

"इसीलिए तो ये घर बने हैं। वृद्धों की मजबूरी और लाचारी बसती है, इन घरों में।" कहकर चौधरी एक पल के लिए चुप हो गए। फिर धीरे से ऐसे बोले जैसे अपने आपसे कह रहे हों—

बहुत दु:ख होता है देखकर। जिन्होंने घर बनाए, वही बेघर हो गए। जिन्होंने जीवन दिया, वही जीने को तरस गए। जिन्होंने रोटी खानी और कमानी सिखाई, वही रोटी के मोहताज हो गए। कैसा वक्त आ गया है

यह। कुछ कहें तो सठिया गए। कुछ बोले तो बक-बक। फिर दादी की ओर देखकर बोले "जरा सोचो राम की माँ। जिनके सिर पर छत ही न रहे, जिन्हें भटकना पड़े दर-बदर, वह भी दूसरों के रहमोकरम पर तो वह बक-बक नहीं करेगा तो क्या गीत गाएगा?"

"गीत तो सुख के होते हैं, राम की माँ। दर्द के तो आँसू ही होते हैं, जो इनकी आँखों में ही ठहर गए हैं।" कहते-कहते चौधरी का गला भर आया।

—: 3 :—

चौधरी ने आज तक कभी इतनी बातें नहीं की थीं। गौतम और दादी दोनों देखकर हैरान हो रहे थे। उनकी ऐसी बातें सुनकर तो दादी का कलेजा ही मुँह को आ रहा था। एक ठंडी सी आह भरकर बोलीं—"आप सच कहते हैं राम के बापू। हमारे देश में तो कभी ऐसा वक्त आया ही नहीं था। लोग आश्रम जाते जरूर थे पर अपनी इच्छा से साधना-भक्ति के लिए। मजबूर होकर कोई नहीं जाता था।"

"यहाँ तो श्रवण पैदा होते थे। बच्चों का दिन माँ-बाप के आशीष के साथ शुरू होता था।"

"तुम ठीक कहते हो चौधराइन। बड़ों का आशीष और उनके अनुभव दोनों अनमोल पूँजी होते हैं। अनुभव रास्ता दिखाते हैं, और आशीष आगे बढ़ाते हैं।"

—: 2 :—

जब से चौधरी शहर आए थे। घूमते-घामते बहुत सारी बातें जान गए थे। उन्हें पता था कि शहरों में बहुत सारे ऐसे आश्रम है, जहाँ वृद्ध लोग जाकर रह सकते हैं। जिनका कोई नहीं, जो अकेले हैं, वह भी। और जिनके सब हैं, पर रखना नहीं चाहते, वह भी। आज कल घरों में, परिवारों के साथ, तो कोई-कोई ही रह पाता है। कोई रहता नहीं, किसी को कोई रखता नहीं। जो रह भी रहे हैं, वह भी लगभग अकेले ही हैं।

बच्चों के साथ रहने का तो जैसे रिवाज ही नहीं रहा। चौधरी इन्हीं विचारों में खोए थे कि गौतम ने उन्हें हिलाकर कहा "दादाजी, कहाँ खो गए?"

चौधरी को चेत हुआ तो हँसकर पूछ लिया—"अच्छा तो बेटा, बता क्या देखा उस उपासना में।"

"देखना क्या था दादाजी। मुझे तो रोना ही आ रहा था।" गौतम ने रुआँसी आवाज में कहा। "सब बूढ़े ही बूढ़े थे। कोई चल नहीं सकता था। कोई बैठ नहीं सकता था। कोई खाँस रहा था, तो कोई हाँफ रहा था। बुझे से चेहरे। वीरान सी नजरें।"

"हाँ, कुछ कमरों में ठीक-ठाक लोग भी थे। थे तो वे भी बूढ़े। पर आपस में बातचीत भी कर रहे थे। हँस-बोल भी रहे थे। उनमें एक दादी तो इतनी प्यारी थीं दादाजी कि क्या बताऊँ। वैसे उन्हें दादा-दादी कहना चाहिए, यह हमारी टीचर ने हमें बताया था।" गौतम ने धीरे से बताया।

''उन्हें देखकर लगता नहीं था कि वह हमारी दादी नहीं। अच्छी लगीं मुझे। गोल-मटोल। फूले-फूले गाल। हँसतीं सी छोटी-छोटी आँखें। मेरा तो मन कर रहा था उनके पास ही बैठूँ।'' गौतम की बात सुनकर दादी ने भी हँसकर कहा, ''क्यों रे गोलू, अपनी दादी को छोड़कर···''

''ओहो—दादी। सच में थोड़े ही बैठने वाला था। वह वैसे ही—तुम तो जानती हो न मुझे''—कहकर मुसकराते हुए बताने लगा—''जानती हो दादी। मेरी क्लास में एक लड़का है मोहन। उसने पता नहीं कहाँ से लाकर जन्मदिन वाली टोपी उन्हें पहना दी। देखकर बहुत खुश हुईं वह।''

''हम स्कूल की ओर से कुछ फल और मिठाई ले गए थे। सबने खुशी से लिया भी, और खाया भी। हमें प्यार भी बहुत किया। दादी तो मुझे गले लगाकर रोने ही लगीं। वह बार-बार मेरा सिर चूम रही थीं और उनके होंठ भी हिल रहे थे। लगता था, जैसे किसी का नाम ले रही हों।''

''हो सकता है बेटा, तुम जितना उनका कोई पोता-पोती हो जिसे वह बहुत प्यार करती हों। शायद उन्हीं के हिस्से का प्यार और आशीष तुम्हें दे रही हों।''

दादा ने बताया तो दादी ने भी हँसकर कह दिया ''तुम तो जानते हो न गोलू। पोते-पोतियाँ दादा-दादी को कितने प्यारे होते हैं। कहते हैं न 'मूल से ब्याज प्यारा'।''

''वह तो मैं अच्छी तरह जानता हूँ दादी। बचपन से ही तो मैं आप लोगों का प्यारा रहा हूँ।'' गौतम की बात सुन दोनों हँस पड़े।

''लेकिन दादाजी, इनके पोते-पोतियाँ इनसे मिलने नहीं आ सकते क्या?''

''आ सकते हैं बेटा। क्यों नहीं आ सकते। जिनका मन होता है, वे आते भी हैं। जो नहीं चाहते, वे नहीं आते।''

चौधरी ने कहने को कह तो दिया। पर मन-ही-मन सोचा कि अगर किसी को आना ही होता तो घर से निकालते ही क्यों? पर कहा कुछ नहीं। चुपचाप सुनने लगे। गौतम अभी भी बता रहा था—

''आप ठीक कहते हैं दादाजी। वहाँ के मैनेजर बता रहे थे इसी आश्रम में एक वृद्ध रहते थे। एक दिन उन्हें कहीं से पता चल गया कि उनका पोता घर आया है। बस फिर क्या था। जिद पकड़ ली। मुझे घर जाना है, अपने पोते से मिलना है। पूरा दिन भूखे-प्यासे मैनेजर के कमरे में बैठे रहे।''

मैनेजर ने घर फोन भी किया। पर कोई नहीं आया—न बाप-बेटा, न पोता। आखिर थक-हारकर वह भूखे सो गए। अब तो वह इस दुनिया में हैं भी नहीं। यह कहानी सुनकर तो दादी की आँखें ही भीग गईं। पर गौतम ने कुछ परेशान सा होकर फिर पूछा ''दादाजी, ऐसा क्यों है यहाँ? हमारे गाँव में तो ऐसा नहीं था। सब मिलकर ही रहते थे।''

''ऐसी बात नहीं बेटा। यह विदेशी हवा है। सभी जगह फैल रही है। हाँ, शहरों में कुछ तेजी से फैल रही है।'' दादा ने उसे समझाते हुए कहा, ''गाँव के लोग अभी सीधे और सरल हैं। सादा खाते हैं, सादा पहनते हैं। इसीलिए मिल-बाँटकर खा भी लेते हैं।''

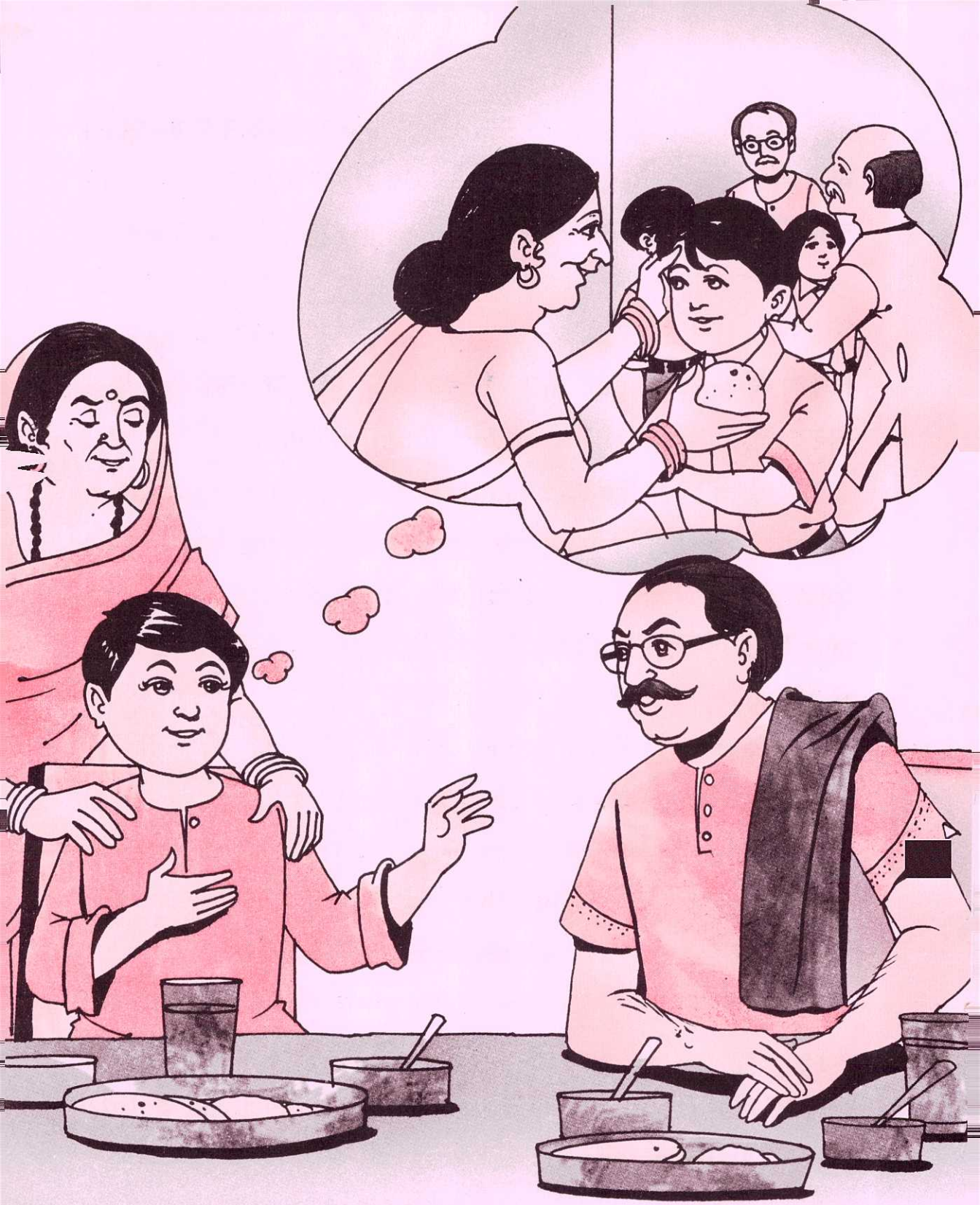

"अब जब बड़े-बूढ़े ही नहीं रहे तो क्या रास्ता और क्या बढ़ना। वैसे भी आशीष तो दिल से ही दिया जाता है। रोता दिल क्या आशीष देगा?"

"तुम तो नहीं जानतीं राम की माँ। सुबह एक वृद्ध मेरे साथ सैर के लिए जाता है। घर में उसके बैठने के लिए कोई जगह नहीं। इसलिए पूरा दिन पार्क में गुजारता है। पेड़ तले बैठकर। कभी सो लेता है। कभी अकेला ही ताश खेल लेता है। न कोई सुख का साथी, न कोई दुःख का। बीमारी भी अकेले झेलता है।"

"बात-बात पर बेटे-बहू को गाली देता है। सोचो, कितना दुःखी होगा वह! वरना अपनी औलाद को कौन कोसता है?"

"यह हाल किसी एक का नहीं है। बहुतों का है। इसलिए रिवाज बन गया है। किसी को लाज नहीं, किसी को शर्म नहीं। कोई कुछ कहता नहीं। न भाई-बंधु। न पास-पड़ोस। सभी एक ही थैली के चट्टे-बट्टे लगते हैं।"

"राम की माँ, आजकल माँ-बाप, माँ-बाप नहीं रहे। कंधे का बोझ हो गए हैं। जब चाहे उन्हें उतार फेंको।"

"किसी दिन तो यह भी बोझ बनेंगे राम के बापू। कुदरत का कानून किसी को नहीं छोड़ता। जैसी करनी, वैसी भरनी तो जानते हो न।" दादी ने ऐसे कहा जैसे किसी को बद्दुआ दे रही हों।

दादी की बात सुनकर चौधरी ने कहा—"तुम किस कानून की बात कर रही हो राम की माँ। कानून तो यहाँ भी हैं। सभी माँ-बाप हकदार हैं

उस कानून के। पर कहते हैं न 'मुँह से उतरी लोई, तो क्या करेगा कोई।' जिनको खुद अपने जन्म देनेवाले नजर नहीं आते, उन्हें कानून क्या दिखाएगा।''

''वैसे भी अभी माँ-बाप इतने कठोर नहीं हुए। सड़क पर ठेला ढो लेते हैं। पर बेटे की बदनामी नहीं करते। ऐसे में जीवन से थका-हारा कौन बाप कुछ रुपए माँगने जाएगा कानून के पास।''

''नहीं, राम की माँ नहीं। वह सीने पर पत्थर रख तो सकते हैं। पर पत्थर मार नहीं सकते। बाप हैं न।''

''रही कुदरत के कानून की बात। वह ठीक है। देर-सवेर लागू भी होती है। पर क्या वह भी अच्छा होगा। आज ये रो रहे हैं, कल वे रोएँगे। आज इनके घर टूटे हैं, कल उनके टूट जाएँगे। यह तो बदला हुआ। दुःख तो दुःख ही रहेगा।''

चौधरी भी गौतम के अवाक् मुख को देख हँसकर बोले—''तेरा दादा हूँ गौतम। तेरे बाप का भी बाप। इतना जानना तो मेरा हक है।''

गौतम समझ गया कि दादाजी उसके मन की बात समझ गए हैं। वह थोड़ा झेंप सा गया। मन ही मन बोला—जानोगे क्यों नहीं दादाजी। मेरे बाप के बाप जो ठहरे।

—: 4 :—

अब तक खाना खत्म हो चुका था। चौधरी सामने से थाली सरकाकर

उठ खड़े हुए। गौतम भी हाथ धोकर दादा के साथ हो लिया।

चौधरी का यह नियम था—खाने के बाद कुछ देर आराम करते थे। बरामदे में पड़ी आराम कुरसी पर। आज जब बैठे, तो गौतम भी आकर बैठ गया। उनके घुटनों के पास।

रोज वह ऐसा नहीं करता था। खाने के बाद वह स्कूल का काम करता था। आज नहीं गया। गौतम को इस तरह बैठते देख, चौधरी समझ गए कि गौतम अभी भी कुछ पूछना चाहता है। उन्होंने प्यार से उसके सिर पर हाथ रखा और पूछा "क्यों बेटा, आज स्कूल का काम नहीं मिला?"

"मिला तो है दादाजी, लेकिन..." गौतम को इस तरह चुप होते देख, उन्होंने फिर पूछा "अभी भी उदास हो बेटा?"

"नहीं, उदास तो नहीं हूँ दादाजी। बस, सोच रहा हूँ।"

"क्या सोच रहे हो बेटा?"

अब तक दादी भी अपना काम खत्म करके आ गई थीं। आज उन्हें भी दादा-पोते की बात में रस आ रहा था। वह भी वहीं बैठकर बातें सुनने लगीं। गौतम कह रहा था—"वही जो आपने अभी बताया दादाजी। सब बूढ़े क्या ऐसे ही रहने लगेंगे। घर छूट जाएँगे सबके। कोई लौटेगा नहीं घर को।"

"अरे-अरे, तूने तो सवालों की बौछार ही कर दी।" चौधरी ने बात को हलका करने के लिए हँसकर कहा "तू परेशान न हो। वक्त बदलता है बेटा। अब भी बदलेगा। और ये भी लौटेंगे। घर तो सभी को अच्छा लगता है न?"

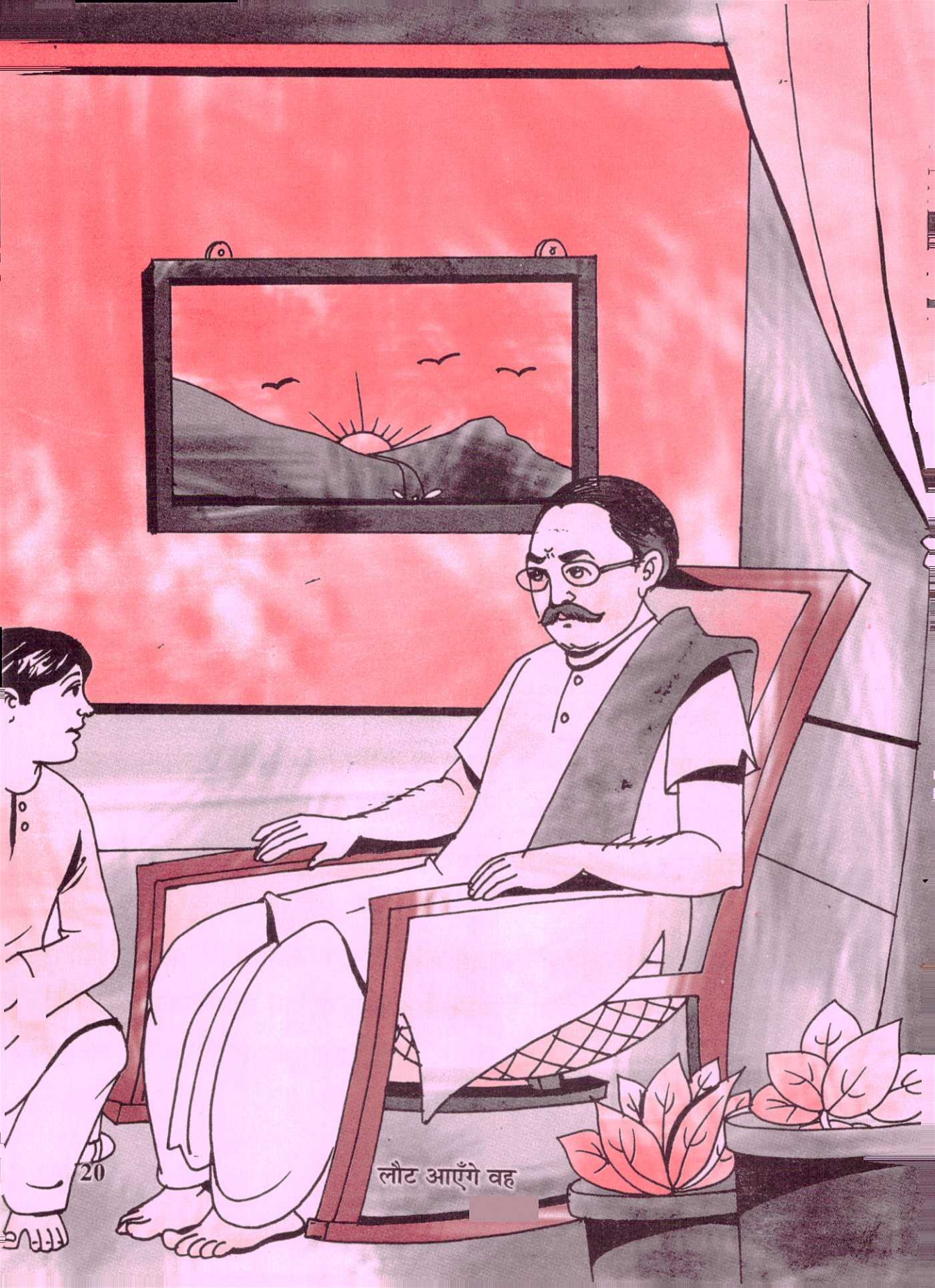

''पंछी भी सारा जहान घूम आते हैं, पर रहते हैं अपने ही बसेरे में। ये तो इनसान हैं। ये सोचते हैं। दर्द होता है इन्हें। याद आती है इन्हें अपने उन घरों की जिन्हें इन्होंने खुद मेहनत से कभी बनाया था। याद आते हैं इन्हें वे अपने, जिन पर कभी इन्हें नाज था।''

''वह लौटना चाहते हैं। पर कोई लौटाए तो सही।''

''कौन लौटाएगा?'' गौतम ने कुछ निराश सा होकर ही कहा तो चौधरी ने एक बार गौर से गौतम के मुँह की ओर देखा। एक पल के लिए आँख मूँदकर कुछ सोचा और फिर धीरे से बोले—''तुम—तुम लौटाओगे उन्हें।''

गौतम को बात कुछ समझ में नहीं आई। हैरान होकर पूछा ''मैं दादाजी! मैं कैसे?''

''हाँ, गौतम तुम।'' दादा ने अपनी बात दोहराई।

''तुम लौटाओगे गौतम। तुम उनका कल हो। तुम उनका भरोसा हो। तुम लौटाओगे, तुम उनके वारिस हो।''

गौतम अब इतना बड़ा तो हो गया था कि बात को कुछ समझ सके। भला-बुरा पहचान सके। उसमें अंतर भी कर सके। फिर भी जान नहीं पा रहा था कि क्या करे।

गौतम को परेशान देखकर, चौधरी ने बात खुलासा करने के लिए कहा—''बेटा 'तुम' से मेरा मतलब उन सबसे है, जो इन वृद्धों के दुःख को समझते हैं। उनके दर्द को अनुभव करते है। जो उनकी चाहत को मानते हैं। जो अपने कर्तव्य को पहचानते है।''

''वे सब मिलकर, फिर से पलट सकते हैं इस वक्त को। तोड़ सकते हैं इस रिवाज को। जोड़ सकते हैं परिवार को।''

''बस अब बहुत हो गया बेटा।'' चौधरी ने जैसे फैसले की तरह कहा। ''बहुत सह लिया इस ढलती उम्र ने। अब और नहीं।''

''अब वक्त तुम्हारे हाथ में है बेटा। तुम भविष्य हो इनका। लौटा दो इनका हक।''

''लौटा दो इनका खोया सम्मान।''

''लौटा दो उनका बिछड़ा परिवार।''

''इनके हिस्से का प्यार इन्हें लौटा दो बेटा'' चौधरी ऐसे कह रहे थे जैसे मिन्नत कर रहे हों। गौतम उनके मुँह की ओर देख रहा था। और वह कहते जा रहे थे—''तुम लौटाओगे, तो वह लौट आएँगे। जरूर लौट आएँगे। बिना किसी गिले के। बिना किसी शर्त के। और बिना किसी शिकवे के।''

''माफ करना वह जानते हैं बेटा।''

दादा की ऐसी बातें सुनकर, गौतम इतना हैरान हो गया था कि कुछ देर तो वह कुछ कह ही नहीं सका। ऐसी बातें इससे पहले न तो उसने कभी सुनी थीं, न ही कभी सोची थीं। आज तो दादाजी ने, जैसे अपना दिल ही निकालकर रख दिया था। वह नहीं जानता था कि दादाजी के दिल में इतना दर्द है।

उसने कोशिश करके, एक बार दादा और दादी की ओर, बारी-बारी देखा। दादी भी चौधरी को टुकुर-टुकुर देख रही थीं। शायद उन्होंने भी

अपने पति के मुँह से ऐसी बातें कभी नहीं सुनी थीं। आज अचंभा लग रहा था उन्हें।

गौतम ने साहस करके कहा—"बहुत कठिन बात है दादाजी।"

"कुछ कठिन नहीं बेटा। यह भी एक रिवाज है। वह बनाने वाले होंगे तुम। बस सोचने भर की देर है।"

"तुम एक कदम उठाओगे, तो सैकड़ों कदम और उठ जाएँगे। तुम प्रेम और आदर का एक दीप जलाओगे तो सैकड़ों दीप जल उठेंगे। केवल हौंसला चाहिए। भरोसा चाहिए। फिर देखो जितने अधिक दीप, उतनी अधिक रोशनी। जितनी अधिक रोशनी, उतना अधिक अँधेरा दूर।" कहते-कहते, गौतम को ऐसा लगा जैसे दादाजी को कुछ याद आ रहा हो। गौतम कुछ पल उनकी ओर देखता रहा। पर वह चुप थे।

फिर अचानक बोले—"बेटा, आज यह दीप और रोशनी की बात करते हुए मुझे एक बहुत पुरानी बात याद आ रही है। एक बार मुझे भी इसी तरह की बड़ी सुंदर सी बात कही थी किसी ने।" "तो सुनाइए न दादाजी," गौतम ने कहा तो दादा धीमे स्वर में गाकर ही सुनाने लगे।

□□□